स्वेच्छासे स्वीकार की हुई गरीबी

गांधीजी

संग्राहक

रवीन्द्र केळेकर

नवजीवन प्रकाशन मन्दिर

अहमदाबाद – १४

पाठकोंसे

मेरे लेखोंका मेहनतसे अध्ययन करनेवालों और उनमें दिलचस्पी लेनेवालोंसे मैं यह कहना चाहता हूं कि मुझे हमेशा एक ही रूपमें दिखाई देनेकी कोई परवाह नहीं है | सत्यकी अपनी खोजमें मैंने बहुतसे विचारोंको छोड़ा है और अनेक नई बातें मैं सीखा भी हूं | उमरमें भले मैं बूढ़ा हो गया हूं, लेकिन मुझे ऐसा नहीं लगता कि मेरा आन्तरिक विकास होना बन्द हो गया है या देह छूटनेके बाद मेरा विकास बन्द हो जायगा | मुझे एक ही बातकी चिन्ता है, और वह है प्रतिक्षण सत्यनारायणकी वाणीका अनुसरण करनेकी मेरी तत्परता | इसलिए जब किसी पाठकको मेरे दो लेखोंमें विरोध जैसा लगे, तब अगर उसे मेरी समझदारीमें विश्वास हो, तो वह एक ही विषय पर लिखे दो लेखोंमें से मेरे बादके लेखको प्रमाणभूत माने |

हरिजनबन्धु, ३०-४-१९३३ **गांधीजी**

अनुक्रमणिका

पाठकोंसे

१. स्वेच्छासे स्वीकार की हुई गरीबी

२. वैध परिग्रह

३. गरीबीका गौरव

४. 'हम सब एक तरहसे चोर हैं'

५. संरक्षकताका सिद्धान्त

६. संरक्षकता – निरी कानूनकी कल्पना नहीं

७. आदर्श समाज किसे कहा जाय ?

८. ईश्वरीय नियम

९. शरीर-श्रमका अमल

१०. स्वावलम्बन और परस्परावलम्बन

११. नौकरों पर अवलम्बन

१२. मनुष्यका कर्तव्य

१

स्वेच्छासे स्वीकार की हुई गरीबी

जब मैंने अपने-आपको राजनीतिक जीवनकी भंवरोंमें खिंचा हुआ पाया, तब मैंने अपने-आपसे पूछा कि मुझे अनैतिकतासे, असत्यसे और जिसे राजनीतिक लाभ कहा जाता है उससे सर्वथा अछूता रहनेके लिए क्या करना जरूरी है | . . . मैं आपको अपने उस प्रयत्नकी तफसीलमें नहीं ले जाना चाहता, यद्यपि उसके सम्बन्धमें मैंने जो कुछ किया वह दिलचस्प है और मेरे लिए पवित्र भी है | मैं आपसे सिर्फ इतना कह सकता हूं कि आरम्भमें मुझे काफी कठिन संघर्षसे गुजरना पड़ा और अपनी पत्नीके साथ तथा, जैसा कि मैं खूब स्पष्टतापूर्वक याद कर सकता हूं, अपने बच्चोंके साथ भी बहुत झगड़ना पड़ा | लेकिन जो हुआ उसे जाने दीजिये; मतलबकी बात यह है की मैं इस दृढ़ निश्चय पर पहुंचा कि यदि मुझे उन लोगोंकी सेवा करनी है, जिनके बीच मुझे जीवन बिताना है और जिनकी कठिनाइयोंको मैं दिन-प्रतिदिन देखता हूं, तो मुझे समूची संपत्तिका, सारे परिग्रहका त्याग कर देना चाहिये |

मैं सचाईके साथ आपसे यह नहीं कह सकता कि ज्यों ही मैं इस निश्चय पर पहुंचा, त्यों ही मैंने एकदम प्रत्येक चीजका परित्याग कर दिया | मुझे आपके सामने यह स्वीकार करना चाहिये कि पहले-पहल इस दिशामें मेरी प्रगति धीमी रही | और अब जब मैं संघर्षके उन दिनोंको याद करता हूं, तो मैं देखता हूं कि आरम्भमें वह दुःखद भी था | लेकिन ज्यों ज्यों दिन बितते गये, मैंने महसूस किया कि कई अन्य चीजोंका भी, जिन्हें मैं तब तक अपनी मानता था, मुझे त्याग करना चाहिये; और एक समय ऐसा आया जब उन वस्तुओंका त्याग मेरे लिए निश्चित रूपसे हर्षका विषय हो गया | तब एकके बाद एक सारी वस्तुएं बहुत तेजीसे मुझेसे छूटती गई | और आपको अपने ये अनुभव सुनाते हुए मैं कह सकता हूं कि मेरे कन्धोंसे एक भारी बोझ उतर गया | मुझे महसूस हुआ कि अब मैं राहतके साथ चल सकता हूं तथा अपने मानव-बन्धुओंकी सेवाके अपने कार्यको भी अधिक निश्चिंतता और अधिक प्रसन्नताके साथ कर सकता हूं | फिर तो किसी भी चीजका परिग्रह मेरे लिए कष्टदायक और भाररूप बन गया |

उस हर्षके कारणकी खोज करते हुए मैंने पाया कि यदि मैं किसी भी चीजको अपनी मानकर अपने पास रखता हूं, तो मुझे उसकी सारी दुनियासे रक्षा भी करनी पड़ती है | मैंने यह भी देखा कि कई लोग ऐसे हैं जिनके पास वह चीज नहीं है, यद्यपि वे उसे चाहते तो हैं; और यदि वे भूके अकाल-पीड़ित लोग मुझे एकान्त स्थानमें पायें, तो वे केवल मेरे पासकी उस चीजका बंटवारा करके ही सन्तुष्ट नहीं होंगे, बल्कि उसे मुझसे छीन भी लेंगे और ऐसी हालतमें मुझे पुलिसकी सहायता भी प्राप्त करनी होगी | मैंने अपने आपसे कहा : यदि वे इसे चाहते हैं और लेते हैं तो ऐसा वे किसी ईर्षापूर्ण हेतुसे नहीं करते हैं, लेकिन इसलिए करते हैं कि उनकी आवश्यकता मेरी आवश्यकतासे अधिक बड़ी है |

और तब मैंने अपने-आपसे कहा : परिग्रह मुझे अपराध जैसा लगता है | मैं उसी स्थितिमें अमुक चीजोंका संग्रह कर सकता हूं, जब मुझे ज्ञात हो कि दूसरे भी, जो उन चीजोंका संग्रह करना चाहते हैं, वैसा कर सकते हैं | लेकिन हम जानते हैं – हममें से हरएक यह अनुभवसे कह सकता है – कि ऐसा होना असंभव है | अतएव एक ही चीज ऐसी है जो सबके द्वारा संग्रह की जा सकती है, और वह है अपरिग्रह – कोई भी चीज अपने पास न रखना | दूसरे शब्दोंमें स्वेच्छापूर्ण त्याग |

अब आप मुझसे कह सकते हैं : लेकिन जब आप स्वेच्छा-स्वीकृत गरीबी तथा अपरिग्रहके बारेमें बोल रहे हैं उस समय भी हम देखते हैं कि आप अपने शरीर पर बहुतसी चीजें धारण किये हुए हैं ! और, यदि आप जिस चीजके बारेमें मैं अभी कह रहा हूं उसके अर्थको ऊपरी तौर पर ही समझे हैं, तो आपका यह कटाक्ष ठीक भी होगा | किन्तु आप उसके ऊपरी तौर पर ही समझे हैं, तो आपका यह कटाक्ष ठीक भी होगा | किन्तु आप उसके ऊपरी अर्थको नहीं, उसके आन्तरिक अर्थको – उसके पीछे रही भावनाको समझिये | जब तक आपके पास शरीर है, तब तक शरीरको कुछ-न-कुछ पहनाना भी पड़ेगा | लेकिन तब आप अपने शरीरके लिए वह सब नहीं लेंगे जो आपको मिल सकता है, बल्कि यथासंभव कमसे कम लेंगे ; जितनेसे आपका काम चल जाय उतना ही लेंगे | आप मकानकी आवश्यकताकी पूर्तिके लिए अनेक हवेलियां नहीं चाहेंगे, बल्कि मामूली झोंपड़ीसे ही संतोष कर लेंगे | आपके भोजन आदिके सम्बन्धमें भी यही नियम लागू होगा |

अब आप देख सकते हैं कि आप और हम जिस चीजको सभ्यता समझते हैं और जिस आनन्दपूर्ण तथा अभीष्ट अवस्थाका मैं आपके सामने चित्रण कर रहा हूं, उन दोनोंके बीच संघर्ष है – ऐसा संघर्ष जो रोज रोज चलता है | दूसरी ओर संस्कृति तथा सभ्यताका आधार आवश्यकताओंकी वृद्धि समझी जाती है | यदि आपके पास एक कमरा है, तो आप दो-तीन कमरोंकी इच्छा करते हैं, और जितने अधिक कमरे होते हैं उतने ही ज्यादा आप खुश होते हैं | इसी तरह आपके मकानमें जितना आ सकता हो उतना ही ज्यादा साज-सामन आप रखनेकी इच्छा रखते हैं | इस तरह आप अपनी आवश्यकतायें बढ़ाते रहते हैं और आपकी इस इच्छाका कोई अन्त नहीं होता | और जितना अधिक संग्रह आप करते हैं, माना जाता है कि आप उतना ही उत्तम संस्कृतिका प्रतिनिधित्त्व करते हैं | शायद मैं यह बात उतनी अच्छी तरहसे आपके सामने नहीं रख पा रहा हूं, जितनी अच्छी तरहसे इस सभ्यताके हिमायती उसे रखेंगे | परन्तु जैसा मैं इसे समझता हूं उसी ढंगसे आपके सामने पेश कर रहा हूं |

दूसरी ओर आप पाते हैं कि जितनी कम चीजें आप अपने पास रखते हैं, जितनी कम चीजें आप चाहते हैं उतने ही आप अधिक अच्छे बनते हैं | किसके लिए ? इस जीवनके सुखभोगके लिए नहीं, लेकिन अपने मानव-बन्धुओंकी उस व्यक्तिगत सेवाके सुखका स्वाद लेनेके लिए, जिसके खातिर आप

अपनी देह, बुद्धि और आत्माका अर्पण करते हैं | . . . यह शरीर भी आपका नहीं है | वह आपको अस्थायी परिग्रहके तौर पर दिया गया है | और जिसने शरीर दिया है वह उसे आपसे ले भी सकता है |

इसलिए अपनेमें वह अडिग विश्वास रखकर मुझे हमेशा ऐसी इच्छा करनी चाहिये कि ईश्वरकी इच्छाके अनुसार इस शरीरका भी समर्पण हो और जब तक यह मेरे पास है तब तक इसका उपयोग भोग-विलासमें न हो, न ऐश-आराममें हो, लेकिन सेवाके लिए हो और हमेशा – अपनी जागृतिके हर क्षणमें – सेवाके लिए ही हो | और यदि यह नियम देहके लिए सही है, तो फिर हमारे उपयोगकी वस्त्रादि वस्तुओंके सम्बन्धमें तो कितना ज्यादा सही होना चाहिये ? . . .

और जिन्होंने सचमुच इस स्वेच्छा-स्वीकृत गरीबीके व्रतका यथा-संभव सम्पूर्णताकी सीमा तक पालन किया है (सम्पूर्णता तक पहुंचना असंभव है, लेकिन मनुष्य जिस सीमा तक जा सकता है उस सीमा तक), जो इस आदर्श दशा तक पहुंचे हैं, वे इस बातकी गवाही देते हैं कि जब आप अपने संग्रहकी हरएक चीजका त्याग कर देते हैं, तब दुनियाकी सारी धन-सम्पत्ति आपकी हो जाती है | दूसरे शब्दोंमें, आपको वे सब वस्तुएं अनायस मिल जाती हैं जो आपके लिए सचमुच जरूरी हैं | यदि भोजनकी आवश्यकता है, तो आपको भोजन मिल जाता है |

आपमें से कई स्त्री-पुरुष प्रार्थना करनेवाले हैं और मैंने बहुतसे ईसाइयोंसे यह सुना है कि उनकी अन्न-वस्त्र आदि हर चीजकी पूर्ति प्रार्थनाके फलस्वरूप होती है | मेरा उनकी इस बातमें विश्वास है | लेकिन मैं चाहता हूं कि आप मेरे साथ एक कदम और आगे बढ़ें और मेरे साथ यह विश्वास करें कि जो लोग पृथ्वीकी हरएक चीज स्वेच्छापूर्वक त्याग देते हैं, इसमें शरीर भी आ जाता है – अर्थात् जो हरएक चीजको छोड़नेके लिए तैयार हैं (उन्हें अपनी इस तैयारीकी जांच बारीकीसे और सख्तीसे करनी चाहिये तथा अपने विरुद्ध हमेशा प्रतिकूल निर्णय देना चाहिये) – जो इस व्रतका पूरा-पूरा पालन करेंगे, वे सचमुच कभी भी किसी अभावका अनुभव नहीं करेंगे | . . .

यहां अभावका शाब्दिक अर्थ नहीं लिया जाना चाहिये | पृथ्वीतल पर मैंने ईश्वर जैसा कठोर मालिक नहीं देखा | वह आपकी पूरी पूरी परीक्षा लेता है | और जब आपको ऐसा लगता है कि आपकी श्रद्धा या शरीर आपका साथ नहीं दे रहा है और आपकी नैया डूब रही है, तब वह आपकी मददको किसी न किसी तरह पहुंच जाता है और यह विश्वास करा देता है कि आपको श्रद्धा नहीं छोड़नी चाहिये; और यह कि वह आपका संकेत पाते ही आनेको तैयार है, परन्तु आपकी शर्त पर नहीं, अपनी शर्त पर | मैंने अपने जीवनमें यही पाया है | मुझे एक भी मौका ऐसा याद नहीं आता, जब ऐन वक्त पर उसने मेरा साथ छोड़ दिया हो | . . .

स्पीचेज़ एण्ड राइटिंग्ज़ ऑफ महात्मा गांधी, १९३३

२

वैध परिग्रह

परिग्रहका अर्थ है भविष्यके लिए व्यवस्था करना | कोई सत्य-शोधक, प्रेमधर्मका अनुयायी, कलके लिए कोई वस्तु नहीं रख सकता | ईश्वर कलके लिए कुछ भी जमा करके नहीं रखता | वह वर्तमानके लिए जितना आवश्यक हो उतना ही पैदा करता है, उससे अधिक कभी पैदा नहीं करता | इसलिए यदि हमें उसकी शक्ति और व्यवस्थामें विश्वास है, तो हमें इसका विश्वास रखना चाहिये कि वह हमें अपनी नित्यकी रोटी देगा, अर्थात् हमारी हर जरूरत पूरी कर देगा | सन्तों और भक्तोंने, जिनका जीवन इस प्रकारकी श्रद्धासे पूर्ण रहा है, अपने अनुभवसे इस श्रद्धाको सही पाया है | ईश्वरीय कानून मनुष्यको उसकी दैनिक आजीविका देता है, उससे अधिक नहीं देता – इस कानूनके हमारे अज्ञान या उपेक्षाके कारण असमानताएं पैदा हो गई है और उनसे तरह तरहकी मुसीबतें हमें उठानी पड़ती हैं | अमीरोंके पास अनावश्यक चीजोंके भण्डार भरे रहते हैं, जिनकी उन्हें जरूरत नहीं होती और इसलिए जिनकी उपेक्षा और बरबादी होती है | उधर करोड़ों लोग जीविकाके अभावमें भूखों मरते हैं और मौतके शिकार होते हैं | यदि हरएक उतनी ही चीजें अपने पास रखे जितनीकी उसे जरूरत हो, तो किसीको भी तंगी नहीं रहे और सब लोग सन्तोषसे रहें | आज तो अमीरोंको गरीबोंसे कम असन्तोष नहीं है | गरीब आदमी लखपति बनना चाहता है; और लखपति करोड़पति बनना चाहता है | सन्तोषकी वृत्तिको सर्वत्र फैलानेकी गरजसे धनवानोंको अपरिग्रहकी दिशामें पहल करनी चाहिये | यदि वे अपनी सम्पत्तिको ही साधारण मर्यादाके भीतर रखें, तो भी भूखोंको आसानीसे खाना दिया जा सकता है और वे भी अमीरोंके साथ साथ सन्तोषका पाठ सीख लेंगे | अपरिग्रहके आदर्शकी सम्पूर्ण सिद्धिकी शर्त यह है कि पक्षियोंकी तरह मनुष्यके पास कोई आसरा न हो, कोई वस्त्र न हो और कलके लिए भोजनका कोई संग्रह न हो | बेशक उसे अपनी रोजकी रोटीकी जरूरत होगी, मगर रोटी जुटाना ईश्वरका काम होगा, उसका नहीं | इस आदर्श तक विरले ही लोग पहुंच सकते हैं | ऊपरसे असंभव दिखाई देनेवाले इस आदर्शसे हम साधारण साधकोंको दूर नहीं भागना चाहिये | हमें यह आदर्श सदा अपनी दृष्टिमें रखना चाहिये और उसके प्रकाशमें अपने परिग्रहकी जांज करते रहना चाहिये तथा उसे कम करनेका प्रयत्न करना चाहिये | सच्ची सभ्यता आवश्यकताओंकी वृद्धिमें नहीं है, परन्तु जान-बूझकर और स्वेच्छापूर्वक उनके घटानेमें है | इसीसे सच्चे सुख और सन्तोषकी वृद्धि होती है तथा सेवाकी शक्ति बढती है | . . .

शुद्ध सत्यकी दृष्टिसे तो शरीर भी एक परिग्रह ही है | यह सच कहा गया है कि भोगकी इच्छाके कारण आत्माके लिए शरीरोंकी सृष्टि होती है | जब यह इच्छा मिट जाती है तब शरीरकी आवश्यकता नहीं रह जाती और मनुष्य जन्म-मरणके कुचक्रसे मुक्त हो जाता है | आत्मा सर्वव्यापक है; उसे पिंजड़े जैसे शरीरमें बन्द रहनेकी या उस पिंजड़ेके खातिर बुरे काम करनेकी या किसीके प्राण लेनेकी भी चिन्ता

क्यों करनी चाहिये ? इस प्रकार हम संपूर्ण त्यागके आदर्श तक पहुंच जाते हैं और जब तक शरीर टिका रहता है तब तक सेवाके काममें उसका उपयोग करना सीखते हैं, यहां तक कि रोटी नहीं परन्तु सेवा हमारे जीवनका आधार बन जाती है | हम केवल सेवाके लिए खाते, पीते, सोते और जागते हैं | ऐसी मनोवृत्तिसे समय पाकर हमें सच्चा सुख और सत्यकी झांकी प्राप्त होती है | हम सबको इसी दृष्टिकोणसे आत्म-निरिक्षण करना चाहिये |

हमें याद रखना चाहिये कि अपरिग्रहका सिद्धान्त वस्तुओंकी भांति विचारों पर भी लागू होता है | जो मनुष्य अपने मस्तिष्कको व्यर्थके ज्ञानसे भर लेता है, वह उस अमूल्य सिद्धान्तका भंग करता है | जो विचार हमें ईश्वरसे विमुख करते हैं, या उसकी ओर नहीं ले जाते, वे हमारे मार्गमें बाधक होते हैं | इस सम्बन्धमें हम गीताके १३ वें अध्यायमें दी हुई ज्ञानकी व्याख्याका विचार कर सकते हैं | वहां हमें यह बताया गया है कि अमानित्व (नम्रता) आदि ज्ञान हैं, अन्य सब-कुछ अज्ञान है | यदि यह सच हो – और इसके सच होनेमें कोई शंका नहीं है – तो आज हम ज्ञान समझकर जिसे गले लगाते हैं वह सब निरा अज्ञान है और इसलिए उससे कोई लाभ होनेके बजाय केवल हानि ही होती है | ऐसे ज्ञानसे दिमाग भटकता है और अन्तमें खाली हो जाता है; असन्तोष फैलता है और अनर्थ बढ़ते हैं | कहना न होगा कि यह जड़ताकी वकालत नहीं है | हमारे जीवनका एक एक क्षण मानसिक या शारीरिक प्रवृत्तिसे भरा होना चाहिये | परन्तु वह प्रवृत्ति सात्त्विक, सत्योन्मुख होनी चाहिये | जिसने अपना जीवन सेवाके लिए अर्पण कर दिया है, वह एक क्षण भी बेकार नहीं रह सकता | परन्तु हमें सत्प्रवृत्ति और दुष्प्रवृत्तिमें भेद करना सीखना होगा | सेवा-परायण मनुष्यको यह विवेक सहज ही प्राप्त होता है |

फ्रॉम यरवडा मंदिर, पृ. २३-२६; १९५७

‘ कलकी चिन्ता न करें ’

जब हम ऐसी निश्चिन्तताका विकास कर लेंगे . . . कि ‘खानेको मिल जाये तो ठीक, न मिले तो हरि-इच्छा’, तब हम अनेक झंझटों और कष्टोंसे मुक्ति पा जायेंगे और स्वतंत्रता हमारे आंगनमें आकर नाचने लगेगी | कोई यह न माने कि निश्चिन्त लोगोंको हमेशा भूखका शिकार होना पड़ता है | कीड़ीको कन और हाथीको मन देनेवाला भगवान मनुष्यको उसकी रोजकी खुराक देना नहीं भूलेगा | सृष्टिके जीव कलकी चिन्ता नहीं करते; वे केवल अपनी दैनिक आजीविकाके लिए कलकी प्रतीक्षा ही करते हैं | परन्तु मनुष्यने अतिशय अभिमानमें आकर यह मान लिया कि मैं ही सृष्टिका एकमात्र स्वामी हूं | वह अपने लिए ऐसी चीजोंका संग्रह बढ़ाता जाता है, जो नष्ट हो जाती हैं | कुदरत प्रतिदिन तीव्र आघात पहुंचाकर मनुष्यको उसके अभिमानसे दूर हटानेका प्रयत्न करती है, लेकिन वह अभिमानका त्याग करनेसे इनकार करता है | सत्याग्रह हमें नम्रताका पाठ सिखानेका एक विशिष्ट उपाय है |

यंग इंडिया, २१-५-’३१; पृ. ११८

३
गरीबीका गौरव

हमारे देशमें गरीबीकी अपनी एक शान है | यहां गरीबको अपनी गरीबीकी शरम नहीं मालूम होती | वह अमीरके महलसे अपनी झोंपड़ीको ज्यादा पसन्द करता है | यही नहीं, बल्कि उसे उस पर नाज भी होता है | भौतिक वस्तुओंके मामलेमें गरीब होने पर भी उसकी आत्मा गरीब नहीं होती | उसके पास सन्तोषका खजाना रहता है | गरीब चाहें तो यह भी कह सकते हैं : 'चूंकि हम सबके सब न तो अमीर बन सकते हैं और न सबके पास महल ही हो सकते हैं, इसलिए चलो, हम अमीरोंके महलोंको ढा दें और उन्हें अपने जैसा बना दें |' लेकिन इस तरीकेसे न तो खुद उन्हें सुख या शान्ति मिल सकती है, न दूसरे किसीको | ईश्वर भी इस तरहके गरीबोंका मित्र और सहायक नहीं बन सकता |

भौतिक वस्तुओंकी विषमताके रूपमें तो गरीबी दुनियाके हरएक हिस्सेमें मौजूद है | शायद एक हद तक वह अनिवार्य है, क्योंकि सभी आदमी न तो एकसे बुद्धिमान होते हैं और न सबकी आवश्यकतायें एकसी होती हैं | अमेरिका जैसे देशमें भी, जहां अपार दौलतके पहाड़ रचे गये हैं और जहां ईश्वरकी जगह दौलतकी ही पूजा होती है, बहुतसे लोग गरीब पाये जाते हैं | पारसी कवि मलाबारीको एक बार बादशाह शाहआलमके रिश्तेदार रंगूनकी गलियोंमें भीक मांगते दिखाई पड़ गये थे | इस पर उन्होंने एक बढ़िया कविता लिखी है | उस कविताका मेरे दिल पर गहरा असर हुआ है | उसमें कुछ इस मतलबकी बात कही गई है कि जिसका मित्र और मददगार ईश्वर है, वही सच्चा दौलतमन्द है |

भारतके लोगोंमें एक ऐसा वर्ग पाया जाता है, जो अपनी जरूरतोंको कमसे कम करनेमें खुशी महसूस करता है | इस तरहके लोग कपड़ेके छोटेसे टुकड़ेमें अपने लिए मुट्ठीभर आटा, चुटकीभर नमक और मिर्च लेकर निकल पड़ते हैं | ये लोग कुएंसे पानी खींचनेके लिए अपने कन्धे पर डोरी और लोटा लिये चलते हैं | उनके पास इनके अलावा और कोई चीज नहीं होती | हर रोज वे १०-१२ मील पैदल चल लेते हैं | अपने पासके कपड़ेमें ही वे अपनी जरूरतका आटा सान लेते हैं | ईंधनके लिए पेड़ोंकी सूखी टहनियां इधर-उधरसे चुनकर ले आते हैं और उसकी आंच पर वे अपने साने हुए आटेके टिक्कड़ सेंक लेते हैं | इस तरह सिका हुआ टिक्कड़ बाटी कहलाता है | मैंने यह बाटी चखी है और मुझे वह बहुत स्वादिष्ट लगी है | असलमें स्वाद भोजनमें नहीं होता, बल्कि ईमानदारीसे की गई मजदूरी और मनके सन्तोषसे जो भूक पैदा होती है, वही भोजनको स्वाद दे देती है | ईश्वर ऐसे ही लोगोंका साथी, मित्र या सहायक बनता है | ये लोग अपनेको किसी राजा या बादशाहसे भी ज्यादा अमीर समझते हैं | जो लोग दिलमें दूसरोंकी दौलतकी चाह रखते हैं और उनसे जलते हैं, उनका मित्र ईश्वर कभी नहीं बनता | इस उदाहरणके अनुसार हर कोई बरताव कर सकता है और खुद सुख तथा शान्तिका अनुभव करके दूसरोंको

भी सुख और शान्तिका मीठा प्रकाश पहुंचा सकता है | इसके विपरीत, जो दौलतकी चाहमें उसके पीछे मारे मारे फिरते हैं, उनके लिए दूसरोंको लूटे और चूसे बिना – फिर इस लूट-खसोटको कितना ही अच्छा नाम क्यों न दिया जाय – कोई चारा नहीं | और इतना सब करनेके बाद भी यह संभव नहीं कि दुनियाके करोड़ों लोग लखपति बन जायं | इसलिए सच्चा सुख तो संतोष और शान्तिमें और ईश्वरके साथ चौबीसों घंटे सम्बन्ध बनाये रखनेमें है |

हरिजनसेवक, २१-७-१९४६; पृ. २३२

'आशीर्वादरूप गरीबी'

मेरे एक मित्र अच्छे पढ़े-लिखे हैं और पैसे-टकेसे भी काफी सुखी हैं | संसारी भोगोंका भी उन्होंने खासा अनुभव किया है | इधर कुछ वर्षोंसे उन्होंने सभी प्रकारकी सवारियोंका त्याग कर दिया है | वर्षामें, जाड़ेमें, धुपमें, तन्दुरुस्तीमें, बीमारीमें आग्रहपूर्वक उन्होंने सवारीके त्यागका प्रण निबाहा है | मुझे उनके इस प्रण-पालनमें कई जगह अति जान पड़ी है | पर उनके आचरणका निर्णय करनेवाला मैं कौन होता हूं? मुझे वे बराबर पत्र लिखते रहते हैं | उनका एक पत्र मुझे हरिजन-यात्रामें मिला था | उसे मैंने 'हरिजनबंधू' के पाठकोंके लिए रख छोड़ा था | उस पत्रमें से उन सज्जनके कुछ अनुभव मैं नीचे देता हूं:

"यों तो मैंने अनेक व्रत ग्रहण किये, पर यह पैदल चलनेका व्रत मुझे बड़ा ही आनन्ददायक लगा| इसमें मुझे अनेक अनुभव प्राप्त हुए और होते जा रहे हैं | ईश्वर पर मेरी श्रद्धा बहुत बढ़ गई है | अहमदाबादसे दो बरस पहले जब मैं भ्रमणके लिए निकला था, तबसे आज मेरी वह श्रद्धा शायद तिगुनी बढ़ गई है |

"इस पैदल यात्रामें मैंने गरीबी भी देखी और अमीरी भी | अमीरोंमें अधिकतर मैंने मगरूरी ही पायी और अनेक जगह धनवानोंका अमर्यादित या उच्छृंखल जीवन दिखाई दिया | अधिकारियोंमें प्राय: हुकूमतका मद देखा | और गरीबीमें स्वभावत: ईश्वर-परायणता, सेवाभाव और संकट झेलनेकी शक्ति देखनेमें आई | 'गरीबी प्रभुको प्यारी है, अमीरी क्या बिचारी है ?' इसका मुझे पग पग पर अनुभव मिला | ईश्वर मुझे हमेशा गरीबी या फकीरीकी ही हालतमें रखे, गरीबीमें ही मैं सदा गुजरान करता रहूं, किसी भी चीजको जेबमें रखनेका मुझे मोह न हो, कलके लिए रोटीका एक टुकड़ा रख छोडूं ऐसी परिग्रह-वृत्तिसे भी ईश्वर मुझे दूर रखे | मैं तो अपने रामकी दी हुई फकीरीमें ही हरदम मगन रहूं|

"और संसारी लोगोंमें पापी मनुष्योंके प्रति तिरस्कार देखा | पर हममें से कौन इस दोषसे मुक्त हो सकता है ? पापके प्रति घृणाभाव रखो, पापीके प्रति नहीं, यह महासूत्र भी मेरी समझमें आ गया |"

इन सज्जनने गुजरातसे लेकर ठेठ उत्तर तक – देहरादूनसे भी आगे तक पैदल यात्रा की है | सैकड़ों गांवोंसे ये गुजरे और गांववालोंके संपर्कमें आये हैं | इसलिए उनका यात्राका अनुभव आदरणीय है | सभी देशों और सभी युगोंके पुरुषोंको पग-पर्यटन तथा अपरिग्रहके चमत्कारका ऐसा ही अनुभव हुआ है | थोरोकी पदयात्राकी स्तुति करनेवाली पुस्तक 'वाल्डेन' को कौन नहीं जानता ? संसारके जिन महान सुधारकोंने समय समय पर धर्ममें संशोधन किये हैं, उन्होंने शायद ही कभी सवारीका उपयोग किया हो | उन्होंने तो हजारों कोस पैदल चलकर ही अपने धर्मचक्रका प्रवर्तन किया था | आज हवाई जहाजमें बैठकर एक जगहसे दूसरी जगह उड़नेवाले मनुष्योंसे जो काम नहीं हो सकता, उस कामको हमारे पूर्वजोंने निश्चय ही किया था | 'उतावला सो बावला धीर सो गंभीर' ठीक ऐसी ही एक कहावत* अंग्रेजीमें भी है| ये कहावतें जिस तरह प्राचीन कालमें सच्ची थीं, उसी तरह आज भी हैं |

हरिजनसेवक, ५-१०-१९३४; पृ. ३२४-२५

*Not mad rush, but unperturbed calmness brings wisdom.

४

‘ हम सब एक तरहसे चोर हैं ’

मैं कहना चाहता हूं कि सब एक तरहसे चोर हैं | अगर मैं कोई ऐसी चीज लेता हूं और रखता हूं, जिसकी मुझे अपने किसी तात्कालिक उपयोगके लिए जरूरत नहीं है, तो मैं किसी दूसरेसे उसकी चोरी ही करता हूं | मैं यह कहनेका साहस करता हूं कि यह प्रकृतिका एक निरपवाद बुनियादी नियम है कि वह रोज केवल उतना ही पैदा करती है जितना हमें चाहिये; और यदि हरएक आदमी जितना उसे चाहिये उतना ही ले, ज्यादा न ले, तो दुनियामें गरीबी न रहे और कोई आदमी भूकसे न मरे | लेकिन जब तक हममें यह असमानता रहेगी, तब तक हम चोरी करते रहेंगे | मैं समाजवादी नहीं हूं और जिनके पास सम्पत्तिका संचय है उनसे मैं उसे छीनना नहीं चाहूंगा | लेकिन मैं यह जरूर कहता हूं कि हममें से जो लोग व्यक्तिगत रूपसे प्रकाशकी खोजमें लगे हुए हैं, उन्हें इस नियमका पालन करना चाहिये | मैं किसीसे उसकी सम्पति छीनना नहीं चाहता, क्योंकि वैसा करूं तो मैं अहिंसाके नियमसे च्युत हो जाऊंगा | यदि किसीके पास मुझसे ज्यादा सम्पत्ति है तो भले रहे | लेकिन यदि मुझे अपना जीवन इस नियमके अनुसार गढ़ना है, तो मैं ऐसी कोई चीज अपने पास नहीं रख सखता जिसकी मुझे जरूरत नहीं है | भारतमें लाखों लोग ऐसे हैं जिन्हें दिनमें केवल एक ही बार खाकर संतोष कर लेना पड़ता है; और उनके उस भोजनमें भी सूखी रोटी और चुटकीभर नमकके सिवा और कुछ नहीं होता | हमारे पास जो कुछ भी है उस पर हमारा और आपका तब तक कोई अधिकार नहीं है, जब तक इन लोगोंके पास पहननेके लिए पूरा कपड़ा और खानेके लिए पूरा अन्न नहीं हो जाता | हममें और आपमें ज्यादा समझ होनेकी आशा की जाती है | अत: हमें अपनी जरूरतोंका नियमन करना चाहिये और स्वेच्छासे अमुक अभाव भी सहना चाहिये, जिससे उन गरीबोंका पालन-पोषण हो सके, उन्हें पूरा कपड़ा और अन्न मिल सके |

स्पीचेस एण्ड राइटिंग्ज ऑफ महात्मा गांधी, पृ. ३८४-८५; १९३३

दूसरेकी चीज उसकी इजाजतके बिना लेना सचमुच चोरी है | लेकिन जो चीज हमें जिस कामके लिए मिली हो उसके सिवा दूसरे काममें उसे लेना या जितने समयके लिए मिली हो उससे ज्यादा समय तक उसे काममें लेना भी चोरी है | इस व्रतकी बुनियादमें यह सूक्ष्म सत्य समाया हुआ है कि परमात्मा प्राणियोंके लिए हमेशाकी जरूरतकी चीजें ही हमेशा पैदा करता है और उन्हें देता है | उससे ज्यादा चीजें परमात्मा पैदा ही नहीं करता | इसका अर्थ यह है कि मनुष्य अपनी कमसे कम जरूरतसे ज्यादा भी लेता है वह सब चोरीका ही लेता है |

सत्याग्रह आश्रमका इतिहास, पृ. ३८-३९; १९५९

५

संरक्षकताका सिद्धान्त

फर्ज कीजिये कि विरासत या उद्योग-व्यवसायके द्वारा मुझे प्रचुर सम्पत्ति मिल गई | तब मुझे यह जानना चाहिये कि वह सब सम्पत्ति मेरी नहीं है; मेरा तो उस पर इतना ही अधिकार है कि जिस तरह दूसरे लाखों आदमी अपना गुजर करते हैं, उसी तरह मैं भी इज्जतके साथ अपना गुजर भर करूं | मेरी शेष सम्पत्ति पर राष्ट्रका अधिकार है और उसीके हितमें उसका उपयोग होना आवश्यक है | इस सिद्धान्तका प्रतिपादन मैंने तब किया था, जब कि जमींदारों और राजाओंकी सम्पत्तिके सम्बन्धमें समाजवादी सिद्धान्त देशके सामने पेश किया गया था | समाजवादी इन सुविधा-प्राप्त वर्गोंको खतम कर देना चाहते हैं, जब कि मैं यह चाहता हूं कि वे (जमींदार और राजा-महाराजा) अपने लोभ और सम्पत्तिसे ऊपर उठकर उन लोंगोंके समकक्ष बन जायं जो मेहनत करके रोटी कमाते हैं | मजदूरोंको भी यह महसूस करना होगा कि मजदूरका काम करनेकी अपनी शक्ति पर जितना अधिकार है, मालदार आदमीका अपनी सम्पत्ति पर उससे भी कम अधिकार है |

यह दूसरी बात है कि इस तरहके सच्चे ट्रस्टी कितने हो सकते हैं | लेकिन अगर सिद्धान्त ठीक है तो यह बात गौण है कि उसका पालन अनेक लोग कर सकते हैं या केवल एक ही आदमी कर सकता है | प्रश्न दृढ़ विश्वासका है | अगर आप अहिंसाके सिद्धान्तको स्वीकार करें तो आपको उसके अनुसार आचरण करनेकी कोशिश करनी चाहिये, चाहे उसमें आपको सफलता मिले या असफलता | आप यह कह सकते हैं कि इस सिद्धान्त पर अमल करना मुश्किल है, लेकिन इस सिद्धान्तमें ऐसी कोई बात नहीं है जिसके लिए यह कहा जा सके कि वह बुद्धिग्राह्य नहीं है |

हरिजनसेवक, ३-६-१९३९; पृ. १२३

अपनी सम्पत्तिका त्याग करके तू उसे भोग

धनवानोंको अपना धर्म सोच लेना है | अगर अपनी जायदादकी रक्षाके लिए उन्होंने सिपाही वगैरा रखे, तो मुमकिन है कि लूटमारके हंगामेमें ये रक्षक ही उनके भक्षक बन जायें | इसलिए धनवानोंको या तो हथियार चलाना सीख लेना चाहिये या अहिंसाकी दीक्षा ले लेनी चाहिये | इस दीक्षाको लेने और देनेका सबसे उत्तम मंत्र है : 'तेन त्यक्तेन भुंजीथा:' – अपनी सम्पत्ति त्याग करके तू उसे भोग | इसको जरा विस्तारसे समझाकर कहूं तो यह कहूंगा: "तू करोड़ों खुशीसे कमा | लेकिन समझ ले कि तेरा धन सिर्फ तेरा धन नहीं, सारी दुनियाका है; इसलिए जितनी तेरी सच्ची जरूरतें हों उतनी पूरी करनेके बाद जो बचे उसका उपयोग तू समाजके लिए कर |" शान्तिकी साधारण अवस्थामें तो इस नसीहत पर अमल

नहीं हुआ | लेकिन संकेतके इस समयमें भी अगर धनिकोंने इसे नहीं अपनाया, तो दुनियामें वे अपने धनके और भोगके गुलाम बनकर ही रह सकेंगे और अन्तमें शरीर-बलवालोंके गुलामीमें बंध जायेंगे |

मैं उस दिनको आता देखा रहा हूं जब धनिकोंकी सत्ताका अन्त होनेवाला है और गरीबोंका सिक्का चलनेवाला है, फिर चाहे वह शरीर-बलसे चले या आत्मबलसे | शरीर-बलसे प्राप्त की हुई सत्ता मानव-देहकी तरह क्षणभंगुर होगी, जब कि आत्मबलसे प्राप्त की हुई सत्ता आत्माकी तरह अजर-अमर रहेगी |

हरिजनसेवक, १-२-१९४२; पृ. २०

६

संरक्षकता – निरी कानूनकी कल्पना नहीं

प्रेम और वर्जनशील परिग्रह एक साथ कभी नहीं रह सकते | सिद्धान्तके तौर पर जब प्रेम परिपूर्ण होता है तब अपरिग्रह भी परिपूर्ण होना चाहिये | यह शरीर हमारा अन्तिम परिग्रह है | इसलिए कोई मनुष्य केवल तभी संपूर्ण प्रेमको व्यवहारमें ला सकता है और पूर्णतया अपरिग्रही हो सकता है, जब कि वह मानव-जातिकी सेवाके खातिर मृत्युका आलिंगन करने तथा देहका त्याग करनेके लिए भी तैयार रहता है | लेकिन यह सिद्धान्तके रूपमें ही सत्य है | यथार्थ जीवनमें हम मुश्किलसे ही सम्पूर्ण प्रेमका व्यवहार कर सकते हैं, क्योंकि यह शरीर परिग्रहके रूपमें हमेशा साथ रहनेवाला है | मनुष्य सदैव अपूर्ण रहेगा और फिर भी वह सदैव पूर्ण बननेकी कोशिश करेगा | अतएव जब तक हम जीवित रहेंगे तब तक पूर्ण प्रेम या पूर्ण अपरिग्रह अलभ्य आदर्शके रूपमें ही रहेंगे | परन्तु उस आदर्शकी ओर बढ़नेकी हमें निरन्तर कोशिश करते रहना चाहिये |

जिनके पास अभी सम्पत्ति है उनसे कहा जाता है कि वे अपनी सम्पत्तिके ट्रस्टी बन जायं और गरीबोंके खातिर उसकी रक्षा और सार-संभाल करें | आप कह सकते हैं कि ट्रस्टीशिप या संरक्षकता तो कानूनकी एक कल्पनामात्र है; व्यवहारमें उसका कहीं कोई अस्तित्त्व दिखाई नहीं पड़ता | लेकिन यदि लोग उस पर सतत विचार करें और उसे आचरणमें उतारनेकी कोशिश भी करते रहें, तो मानव-जातिके जीवनकी नियामक शक्तिके रूपमें प्रेमकी आज जितनी सत्ता दिखाई देती है उससे कहीं अधिक दिखाई देगी | बेशक, पूर्ण संरक्षकता तो युक्लिडकी बिन्दुकी व्याख्याकी तरह एक कल्पना ही है और उतनी ही अप्राप्य भी है | लेकिन यदि हम उसके लिए कोशिश करें, तो दुनियामें समानताकी सिद्धिकी दिशामें हम दूसरे किसी उपायसे जितने आगे बढ़ सकेंगे उसके बजाय इस उपायसे ज्यादा आगे बढ़ सकेंगे |

दि मॉडर्न रिव्यू , अक्टूबर १९३५; पृ. ४१२

७

आदर्श समाज किसे कहा जाय ?

अहमदाबादसे एक मित्र लिखते हैं: "आदर्श समाज वह है जिसमें कमसे कम परिश्रम करके प्रत्येक व्यक्ति उत्तरोत्तर बढ़नेवाली आवश्यकताओंका जीवन जी सकेगा।" यह बात अच्छी लगनेवाली है और ऐसी दलीलोंसे इसका समर्थन किया गया है जो ऊपरसे ठीक मालूम होती हैं और जिन्हें अनके लोग स्वीकार कर सकते हैं | ...कमसे कम परिश्रम करके दुनियाके प्रत्येक व्यक्तिको ऊंचेसे ऊंचा जीवन बिताने योग्य बनना चाहिये – यह विचार उतना ही बेतुका मालूम होता है जितनी सुईके छेदमें से ऊंटके निकलनेकी आशा | लेखकके उच्च जीवनका अर्थ ऐश-आरामका जीवन मालूम होता है, जो किसी भी संपूर्ण समाजके लिए असंभव वस्तू है | और जब ऐश-आरामकी कोई सीमा ही न हो, तब हम कहां जाकर रुकेंगे ? संसारके सारे धर्म-ग्रंथोंने इससे ठीक उलटी शिक्षा दी है | उन्होंने हमारे सामने 'सादा जीवन और उच्च विचार' का आदर्श प्रस्तुत किया है | अधिकतर लोग इसके सत्यको समझते और स्वीकार करते हैं, लेकिन मानवीय निर्बलताके कारण इस आदर्श तक पहुंचनेमें वे असमर्थ रहते हैं | लेकिन ऐसे जीवनकी कल्पना करना पूरी तरह संभव है | भारतके करोड़ों लोगोंको अमुक आयकी गारंटी दी जानी चाहिये, यह बिलकुल ठीक है | और इस आदर्शको सिद्ध करनेके लिए बड़े पैमानेके यंत्रोद्योग न केवल अनावश्यक हैं, बल्कि पूरे पूरे बरबादी करनेवाले हैं |

मनुष्य जिस क्षण अपनी दैनिक आवश्यकतायें बढ़ाना चाहता है, उसी क्षण वह 'सादा जीवन और उच्च विचार' के आदर्शको सिद्ध करनेके अपने प्रयत्नसे नीचे गिरता है | इतिहास इसके पर्याप्त प्रमाण देता है | मनुष्यका सच्चा सुख सन्तोषमें निहित है | जो मनुष्य असन्तुष्ट है वह कितनी ही सम्पत्ति होने पर भी अपनी इच्छाओंका दास बन जाता है | और इच्छाओंकी दासतासे बढ़कर दूसरी कोई दासता इस जगतमें नहीं है | सारे सन्तों और पैगम्बरोंने पुकार पुकार कर यह घोषणा की है कि मनुष्य ही अपना बुरेसे बुरा और मनुष्य ही अपना अच्छेसे अच्छा मित्र हो सकता है | स्वतंत्र रहना या दास बनना उसके अपने हाथमें है | और जो बात व्यक्तिके लिए सच है, वही समाजके लिए भी सच है |

हरिजन, १-२-१९४२; पृ. २७

८

ईश्वरीय नियम

शरीर-श्रम तमाम मनुष्योंके लिए लाजिमी है, यह बात पहले-पहल टॉल्स्टॉयका एक निबंध पढ़कर मेरे मनमें बैठ गयी | यह बात इतनी साफ जाननेसे पहले इस पर अमल तो मैं रस्किनकी 'अन्टू दिस लास्ट' (सर्वोदय) पढ़कर तुरन्त ही करने लग गया था | शरीर-श्रम अंग्रेजी शब्द 'ब्रेड-लेबर' का अनुवाद है | 'ब्रेड-लेबर' का शब्दके मुताबिक अनुवाद है रोटी (के लिए) मेहनत | रोटीके लिए हरएक मनुष्यको मेहनत करनी चाहिये, शरीरको झुकाना चाहिये, यह ईश्वरका कानून है | यह मूल खोज टॉल्स्टॉयकी ही नहीं है, लेकिन उनसे बहुत कम मशहूर रशियन लेखक बोन्दरेव्हकी है | टॉल्स्टॉयने उसे प्रसिद्ध किया और अपनाया | इसकी झांकी मेरी आंखें भगवद्गीताके तीसरे अध्यायमें करती हैं | यज्ञ किये बिना जो खाता है वह चोरीका अन्न खाता है, ऐसा कठिन शाप यज्ञ न करनेवालेको गीतामें दिया गया है | यहां यज्ञका अर्थ शरीर-श्रम या रोटीके लिए मेहनत ही शोभता है और मेरी रायमें यही अर्थ संभव है |

बुद्धि भी इसी निर्णयकी ओर हमें ले जाती है | जो मेहनत नहीं करता उसे खानेका क्या हक है ? बाइबल कहती है : 'अपनी रोटी तू अपना पसीना बहाकर कमा और खा' | करोड़पति भी अगर अपने पलंग पर लोटता रहे और उसके मुंहमें कोई खाना डाले तभी खाये, तो वह ज्यादा समय तक खा नहीं सकेगा | इसमें उसको मजा भी नहीं आयेगा | इसलिए वह कसरत वगैरा करके भूक पैदा करता है और खाता तो है अपने ही हाथ-मुंह हिलाकर | अगर यों किसी न किसी रूपमें अंगोंकी कसरत राय-रंक सबको करनी ही पड़ती है, तो रोटी पैदा करनेकी कसरत ही सब क्यों न करें ? यह सवाल कुदरती तोर पर उठता है | किसानको हवाखोरी या कसरत करनेके लिए कोई कहता नहीं है और दुनियाके ९० फीसदीसे भी ज्यादा लोगोंका निर्वाह खेती पर होता है | बाकीके दस फीसदी लोग अगर इनकी नकल करें, तो जगतमें कितना सुख, कितनी शांति और कितनी तंदुरूस्ती फैल जाये | और अगर खेतीके साथ बुद्धि भी मिल जाय, तो खेतीसे संबंध रखनेवाली बहुतसी मुसीबतें आसानीसे दूर हो जायें | फिर, अगर इस शरीर-श्रमके निरपवाद कानूनको सब लोग मानें, तो ऊंच-नीचका भेद दुनियासे मिट जाय | आज तो जहां ऊंच-नीचकी गंध भी नहीं थी वहां यानी वर्ण-व्यवस्थामें भी वह घुस गई है | मालिक-मजदूरका भेद सामान्य और स्थायी हो गया है और गरीब धनवानसे जलता है | अगर सब रोटीके लिए मेहनत करें, तो ऊंच-नीचका भेद न रहे; और फिर भी धनिक वर्ग रहेगा तो वह खुदको धनका मालिक नहीं, बल्कि उस धनका रखवाला या ट्रस्टी मानेगा और उसका ज्यादातर उपयोग सिर्फ लोगोंकी सेवाके लिए ही करेगा | जिसे अहिंसाका पालन करना है, सत्यकी भक्ति करनी है और ब्रह्मचर्यको कुदरती बनाना है, उसके लिए तो शरीर-श्रम रामबाण-सा हो जाता है | यह श्रम सचमुच तो खेतीमें ही होता है | लेकिन सब

खेती नहीं कर सकते, ऐसी हालत आज तो है ही | इसलिए खेतीके आदर्शको खयालमें रखकर खेतीके बदले आदमी दूसरी मेहनत कर सकता है – जैसे कताई, बुनाई, बढ़ईगिरी, लुहारी वगैरा |

सबको अपना भंगी तो बनना ही चाहिये | जो खाता है वह टट्टी जरूर फिरेगा | जो आदमी टट्टी फिरता है वही अपनी टट्टी जमीनमें गाड़ दे, यह उत्तम रिवाज है | अगर यह नहीं हो सके तो प्रत्येक कुटुम्ब अपना यह फर्ज अदा करे | जिस समाजमें भंगीका अलग पेशा माना गया है, उसमें कोई बड़ा दोष पैठ गया है, ऐसा मुझे तो बरसोंसे लगता रहा है | इस जरूरी और तंदुरुस्ती बढ़ानेवाले कामको सबसे नीचा काम पहले-पहल किसने माना, इसका इतिहास हमारे पास नहीं है | पर जिसने भी ऐसा माना उसने हम पर उपकार तो नहीं ही किया | हम सब भंगी हैं, यह भावना हमारे मनमें बचपनसे जम जानी चाहिये; और उसका सबसे आसान तरीका यह है कि जो लोग समझ गये हैं वे शरीर-श्रमका आरंभ पाखाना-सफाईसे करें | जो मनुष्य समझ-बूझकर, ज्ञानपूर्वक यह काम करेगा वह उसी क्षणसे धर्मको निराले ढंगसे और सही तरीकेसे समझने लगेगा |

मंगल-प्रभात, पृ. ४१-४४; १९५८

बौद्धिक और शारीरिक श्रम

प्र. – हम किसी रवीन्द्रनाथ या रमणके लिए शरीर-श्रम करके ही रोटी कमाने पर जोर क्यों दें ? क्या यह उनकी दिमागी ताकतकी निरी बरबादी नहीं होगी ? दिमागी काम करनेवालोंको शरीर-श्रम करनेवालोंको बराबर ही क्यों न समझा जाय; क्योंकि दोनों ही समाजको फायदा पहुंचानेवाला काम करते हैं ?

उ ० दिमागी काम भी अपना महत्त्व रखता है और जीवनमें उसका एक निश्चित स्थान है | लेकिन मैं तो शरीर-श्रमकी जरूरत पर जोर देता हूं | मेरा यह दावा है कि हम फर्जसे किसी भी मनुष्यको छुटकारा नहीं मिलना चाहिये | इससे मनुष्यके दिमागी कामकी उन्नति ही होगी | मैं तो यहां तक कहनेकी हिम्मत करता हूं कि पुराने जमानेमें हिन्दुस्तानके ब्राह्मण बौद्धिक और शारीरिक दोनों काम करते थे | वे चाहे न भी करते हों, लेकिन आज तो शारीरिक कामकी जरूरत सिद्ध हो चुकी है | इस सिलसिलेमें मैं आपको टॉल्स्टॉयके जीवनका हवाला देते हुए यह बताना चाहूंगा कि उन्होंने रुसी किसान बोन्दरेव्हके शारीरिक कामके सिद्धान्तको किस प्रकार प्रसिद्ध किया |

हरिजनसेवक, २३-२-१९४७; पृ. २८

९

शरीर-श्रमका अमल

अहिंसाके प्रयोगोंसे मैं यह सिखा हूं कि व्यवहारमें अहिंसाका अर्थ सब लोगोंका शरीर-श्रम है | एक रुसी दार्शनिक बोन्दरेव्हने इसे रोटीके लिए श्रम कहा है | इसका परिणाम आपसमें गहरेसे गहरा सहयोग होगा | दक्षिण अफ्रीकाके प्रथम सत्याग्रही सबकी भलाई और सम्मिलित कोषके लिए मेहनत करते थे और उड़ते पंछीयोंकी-सी बेफिक्री अनुभव करते थे | उनमें हिन्दू, मुसलमान (शिया और सुन्नी), ईसाई (प्रोटेस्टेन्ट और रोमन कैथलिक), पारसी और यहूदी सभी थे | अंग्रेज और जर्मन भी थे | धंधेके लिहाजसे उनमें वकील थे, स्थपति और बिजलीकी विद्या जाननेवाले इंजीनियर थे, छपाईका काम करनेवाले थे और व्यापारी थे | सत्य और अहिंसाके आचरणसे धार्मिक मतभेद मिट गये थे और हमने सब धर्मोंमें सत्यके दर्शन करना सीख लिया था | दक्षिण अफ्रीकामें मैंने जो आश्रम कायम किये, उनमें एक भी मजहबी झगड़ा हुआ हो ऐसा मुझे याद नहीं आता | सब लोग छपाई-काम, बढ़ईगिरी, मोचीकाम, बागबानी, इमारत बनानेका काम और इसी तरहके दूसरे काम हाथसे करते थे | यह मेहनत किसीको भाररूप नहीं लगती थी | उसमें सबको आनन्द आता था | शामका समय साहित्यिक अध्ययनमें जाता था | सत्याग्रही सेनाका अग्रणी दल इन्हीं स्त्री-पुरुषों और लड़कोंका बना हुआ था | इनसे ज्यादा वीर और सच्चे साथी मुझे नहीं मिल सकते थे | हिन्दुस्तानमें दक्षिण अफ्रीका जैसा ही अनुभव रहा और मुझे भरोसा है कि उसमें कुछ सुधार ही हुआ | सभी लोग मानते हैं कि अहमदाबादका मजदूर-संगठन भारतमें उत्तम संगठन है | उसका काम जिस ढंगसे शुरु हुआ था उसी तरह चलता रहा, तो अन्तमें वहांकी मिलोंमें मौजूदा मालिकों और मजदूरोंकी संयुक्त मालिकी होकर रहेगी | यह स्वाभाविक परिणाम अगर नहीं निकला, तो पता चल जायेगा कि संगठनकी अहिंसामें खामियां थीं | बारडोलीके किसानोंने वल्लभभाईको सरदारकी पदवी दी और अपनी लड़ाई जीती | बोरसद और खेड़ाके किसानोंने भी वैसा ही किया | वे सब वर्षोंसे रचनात्मक कार्यक्रम पर अमल कर रहे है | मगर इस अमलसे उनके सत्याग्रही गुणोंका ऱ्हास नहीं हुआ है | मुझे पूरा यकीन है कि सविनय आज्ञाभंग आन्दोलन हुआ, तो अहमदाबादके मजदूर और बारडोली तथा खेड़ाके किसान भारतके और किसी भी हिस्सेके किसानों और मजदूरोंसे जौहर दिखानेमें पीछे नहीं रहेंगे |

चौंतीस वर्षके सत्य और अहिंसाके लगातार प्रयोग और अनुभवसे मेरा यह दृढ़ विश्वास हो गया है कि यदि अहिंसाका ज्ञानपूर्ण शरीर-श्रमके साथ सम्बन्ध न होगा और अपने पड़ोसियोंके साथके हमारे प्रतिदिनके व्यवहारमें उसका परिचय न मिलेगा, तो अहिंसा टिक नहीं सकेगी | यह है रचनात्मक कार्यक्रमका रहस्य | यह साध्य नहीं है, साधन है; मगर है इतना अनिवार्य कि उसे साध्य भी समझ लें तो

अनुचित नहीं होगा | अहिंसक विरोधकी शक्ति रचनात्मक कार्यक्रम पर ईमानदारीके साथ अमल करनेसे ही पैदा हो सकती है |

हरिजनसेवक, २७-१-१९४०; पृ. ४०३

१०

स्वावलम्बन और परस्परावलम्बन

स्वाश्रयके मानी है किसीकी भी मददके बिना अपने पावों पर खड़े रहनेके शक्ति | इसका मतलब यह नहीं कि दूसरोंकी सहायताके संबंधमें मनुष्य लापरवाह हो जाय अथवा उसका त्याग करे अथवा दूसरोंकी मदद न चाहे या न मांगे | परन्तु दूसरोंकी मदद चाहने पर भी, मांगने पर भी, यदि वह न मिल सके, तो भी जो मनुष्य स्वस्थ रह सकता है, स्वमानकी रक्षा कर सकता है वह स्वाश्रयी है | जो किसान दूसरोंकी मदद मिल सकती हो तो भी स्वयं ही हल जोते, अनाज बोये, फसल काटे, खेतीके औजार तैयार करे, अपने कपड़े आप ही काटे, बुने या सीये, अपने लिए अनाज भी स्वयं तैयार करे और घर भी स्वयं तैयार करे, वह या तो बेवकूफ होगा, अभिमानी होगा अथवा जंगली होगा | स्वाश्रयमें शरीर-श्रम तो आ ही जाता है | अर्थात् प्रत्येक मनुष्यको अपनी आजीविकाके लिए आवश्यक शरीर-श्रम करना ही चाहिये | इसलिए जो मनुष्य आठ घंटे खेतीका काम करता है उसे जुलाहा, बढ़ई, लुहार आदि कारीगरोंकी मदद लेनेका अधिकार है, उनसे मदद लेना उसका धर्म है और उसे वह मदद आसानीसे मिल सकती है | और बढ़ई, लुहार आदि कारीगर वर्ग किसानकी मेहनतके फलस्वरूप अन्नादि प्राप्त कर सकते हैं | जो आंख हाथकी सहायताके बिना ही काम चला लेनेका इरादा रखती है वह स्वाश्रयी नहीं है बल्कि अभिमानी है | और जिस प्रकार हमारे शरीरके अवयव अपने अपने कार्यमें स्वाश्रयी है, फिर भी एक-दूसरेकी मदद लेनेके कारण परस्परावलम्बी हैं, वैसे ही हिन्दुस्तान-रुपी शरीरके हम तीस कोटी लोग अवयव हैं | सबको अपने अपने क्षेत्रमें स्वाश्रयी बननेका धर्म पालन करना चाहिये और अपनेको राष्ट्रका अंग सिद्ध करनेके लिए एक-दूसरेके साथ मददका लेन-देन भी करना चाहिये | यह होगा तभी राष्ट्रका विकास हुआ माना जा सकेगा और तभी हम राष्ट्रप्रेमी गिने जा सकेंगे |

हिन्दी नवजीवन, ८-४-१९२६; पृ. २६९

११

नौकरों पर अवलम्बन

घरेलू नौकरोंकी संस्था पुरानी है | परन्तु नौकरोंके प्रति मालिकका रुख समय-समय पर बदलता रहा है | कुछ लोग नौकरोंको परिवारके आदमी समझते हैं और कुछ उन्हें गुलाम या जंगम संपत्ति मानते हैं | संक्षेपमें सामान्यत: नौकरोंके प्रति समाजका जो रुख होता है, वह इन दो आत्यंतिक विचारोंके बीचमें आ जाता है | आजकल सब जगह नौकरोंकी बड़ी मांग है | उन्हें अपने महत्त्वका पता लग गया है और इसलिए कुदरती तौर पर वे वेतन और नौकरीके बारेमें अपनी ही शर्तें सामने रखते हैं | यदि इसके साथ ही हमेशा उन्हें अपने कर्तव्यका ज्ञान हो और वे उसका पालन भी करें तो ठीक हो | उस हालतमें वे नौकर नहीं रहेंगे और अपने लिए परिवारके सदस्योंका दरजा प्राप्त कर लेंगे | परन्तु आजकल तो सबका हिंसामें विश्वास हो गया है | तब फिर नौकर उचित ढंगसे अपने मालिकोंके परिवारके सदस्योंका दरजा कैसे प्राप्त कर सकते हैं ? यह प्रश्न ऐसा है जो अवश्य पूछा जा सकता है |

मेरी रायमें जो आदमी दूसरोंका सहयोग चाहता है और उन्हें सहयोग देना चाहता है, उसे नौकरों पर निर्भर नहीं रहना चाहिये | यदि नौकरोंकी तंगीके समय किसीको नौकर रखना पड़ता है, तो उसे मुंहमांगा वेतन देना पड़ता है और दूसरी सब शर्तें भी माननी पड़ती है | नतीजा यह होता है कि वह मालिक होनेके बजाय अपने नौकरका नौकर बन जाता है | यह न मालिकके लिए अच्छा है, न नौकरके लिए | परन्तु अगर किसी व्यक्तिको दूसरे मानव-बन्धुसे गुलामी नहीं बल्कि सहयोग चाहिये, तो वह न केवल अपनी ही सेवा करेगा, बल्कि उसकी भी करेगा जिसके सहयोगकी उसे जरूरत है | इस सिद्धान्तका विस्तार करनेसे मनुष्यका परिवार उतना ही विशाल हो जायेगा जितना यह संसार है और अपने मानव-बन्धुओंके प्रति उसके रुखमें वैसा ही परिवर्तन हो जायगा | वांछित उद्देश्यकी प्राप्तिका दूसरा कोई मार्ग नहीं है |

जो इस सिद्धान्त पर अमल करना चाहता है, वह छोटे छोटे प्रारम्भ करके सन्तोष मान लेगा | मनुष्यमें हजारोंका सहयोग ले सकनेकी योग्यता होते हुए भी इतना संयम और स्वाभिमान तो होना ही चाहिये कि वह अकेला खड़ा रह सके | ऐसा व्यक्ति कभी सपनेमें भी किसी आदमीको अपना दास नहीं समझेगा और न उसे अपने नीचे दबा कर रखनेकी कोशिश करेगा | सच तो यह है कि वह बिलकुल भूल जायगा कि वह अपने नौकरोंका मालिक है और उन्हें अपने स्तर पर लानेकी पूरी कोशिश करेगा | दूसरे शब्दोंमें, जो चीज दूसरोंको न मिल सके उसके बिना काम चलाकर उसे सन्तोष कर लेना चाहिये |

हरिजन, १०-३-१९४६; पृ. ४०

१२

मनुष्यका कर्तव्य

मनुष्यका कर्तव्य . . . दूसरोंकी नि:स्वार्थ सेवा करना है; और उसे ऐसी सेवा दूसरोंकी भलाई करनेके लिए नहीं करनी चाहिये, लेकिन इसलिए करनी चाहिये कि यह तो उसके जीवनका नियम ही है | कुछ लोग ऐसे हैं जो यह सोचते हैं कि जिन बातोंका असर सिर्फ उन्हीं पर होता है, उन्हें वे अपनी मरजीके अनुसार कर सकते हैं; लेकिन सच पूछा जाय तो कोई भी मनुष्य दुनियामें ऐसा कोई काम नहीं कर सकता, जिसका प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूपमें उसके मानव-बंधुओंकी भलाई पर असर न पड़ता हो |

हरएक मनुष्यको यह याद रखना चाहिये कि उसके गुप्तसे गुप्त विचारोंका असर खुद उस पर और दूसरों पर भी पड़ता है | इसलिए उसे आत्मा-संयमका अभ्यास करना चाहिये, जिससे वह सारे दुर्विचारोंको अपने मनसे दूर रख सके और उन्हीं विचारोंको मनमें स्थान दे सके जो उदात्त तथा महान हैं| उसे अपने शरीरको भी अपने मनकी तरह ही शुद्ध और निर्दोष रखना चाहिये | मनुष्य अपने विचारोंकी ही उपज है; जैसा वह सोचता है वैसा ही वह बन जाता है | इसलिए बुराईकी दिशामें ले जानेवाले सारे प्रलोभनोंका कठोरतापूर्वक दमन कर देना चाहिये | जो मनुष्य पूर्णतया अपनी इन्द्रियों और वासनाओंका स्वामी नहीं बन गया है, वह किसी भी अच्छाई पर नहीं आ सकता |

जो मनुष्य अपने मनको हर प्रकारके दोषसे शुद्ध रखना सीख गया है, उसे जीवनमें अपने ध्येयकी स्पष्ट कल्पना होनी चाहिये | जो मनुष्य अपने ध्येयको निश्चित किये बिना ही अपना जीवन-कार्य शुरु कर देता है, वह अपनी शक्तियोंको बरदाद कर देता है और हमेशाके लिए उसी तरह नष्ट हो जाता है, जिस प्रकार बिना पतवारकी नाव समुद्रकी लहरोंसे टकराकर इधर-उधर भटकती रहती है और अन्तमें नष्ट हो जाती है | सब ध्येयोंमें उत्तम ध्येय ईश्वरकी उपासना है | और सबसे ऊंचे प्रकारकी उपासना जीवनमें नैतिक नियमका पालन करके तथा मानव-जातिकी नि:स्वार्थ सेवा करके ईश्वरका कार्य करनेमें निहित है | हजारों दुष्ट और दुराचारी लोग व्यर्थमें ईश्वरका नाम लेते हैं | तोतेको भी ईश्वरका नाम लेना सिखाया जा सकता है; लेकिन क्या उसे ईश्वरका उपासक या पुण्यात्मा कहा जा सकता है ? मानव-सेवा तो सारे मनुष्योंके लिए सभी परिस्थितियोंमें संभव है | जो मनुष्य सेवाको अपने जीवनका सबसे ऊंचा ध्येय मानता है, वह ऊंचे दरजेका नैतिक व्यक्ति बने सिवा रह ही नहीं सकता | क्योंकि दुनियाकी भलाई नैतिक सद्गुणोंके व्यवहारके साथ घनिष्ठतापूर्वक बंधी हुई है |

मनुष्यके कामोंकी जांच करते समय हमें हमेशा यह कसौटी अपनानी चाहिये – उसका काम दुनियाकी भलाईमें सहायक होता है या नहीं | व्यापारीको यह देखना चाहिये कि वह अपने ग्राहकोंको

नुकसान पहुंचाकर लाभ नहीं उठाता | वकीलों और डॉक्टरोंको अपनी कमाईका विचार करनेकी अपेक्षा अपने मुवक्किलों और रोगियोंके हितका विचार करना चाहिये | मांको हमेशा इस बातका ध्यान रखना चाहिये कि झूठे प्यार या इसी प्रकारके दूसरे व्यवहारसे उसका बच्चा बिगड़ न जाय | एक अपढ़ गरीब मजदूर उस चतुर व्यापारी, वकील या डॉक्टरसे कहीं अधिक बड़ा मनुष्य है, जिसने अपना धन अनुचित साधनोंसे कमाया है | हमें यह कभी नहीं भूलना चाहिये कि हममें से तुच्छ मनुष्य भी ऊपरके सिद्धांतसे अपने जीवनका मार्गदर्शन करनेमें समर्थ हो जाता है | हममें से नीचेसे नीचा मनुष्य भी पैसे तथा पदकी सीमाओंसे ऊपर उठ सकता है; क्योंकि मनुष्यकी महानता धन या सामाजिक स्थिति पर निर्भर नहीं करती, लेकिन एकमात्र उसके जीवन और चरित्र पर निर्भर करती है | किसी मनुष्यके चरित्रको जांचनेके लिए हमें उसके हृदयकी आन्तरिक प्रवृत्तियोंको जानना चाहिये | एक मनुष्य भिखारीको अपनी निगाहसे दूर करनेके लिए एक रुपया दे सकता है, जब कि दूसरा दया और प्रेमसे द्रवित होकर उसे सिर्फ चार आने देता है | इन दोनोंमें दूसरा मनुष्य स्पष्टतया अधिक भला मनुष्य है, यद्यपि उसने गरीबको पहले मनुष्यसे बहुत कम दिया है |

तो सारी बातका सार यह है कि उसी मनुष्यको सच्चा धार्मिक या नीतिवान कहा जा सकता है, जिसका मन घृणा या स्वार्थपरतासे दूषित नहीं है और जो पूर्ण शुद्धताका तथा नि:स्वार्थ सेवाका जीवन जीता है; और केवल उसी मनुष्यको सच्चे अर्थमें धनी या सुखी कहा जा सकता है | केवल ऐसे ही मनुष्य मानव-जातिका भला कर सकते हैं; क्योंकि जो कुछ भी भला और महान है, उस सबकी बुनियाद सत्य ही है | मानव-जातिके सच्चे सेवकके लिए यह सवाल कभी पैदा ही नहीं होता कि सेवाका कौनसा प्रकार सबसे अच्छा है | जब हम नैतिक नियमकी भव्यताका अनुभव कर लेंगे तब हम समझ जायेंगे कि हमारा सुख या दु:ख कितनी कम मात्रामें स्वास्थ्य, सफलता, कीर्ति तथा ऐसी ही दूसरी चीजों पर निर्भर रहता है | जैसा कि एमर्सन द्वारा सुन्दर ढंगसे कहा गया है, सज्जनोंके दु:ख और कष्ट भी उनके सुखमें सहायक होते हैं, जब कि दुर्जनोंका धन और कीर्ति भी केवल उन्हींके लिए नहीं बल्कि सारी दुनियाके लिए दु:खदायी होते हैं |

"पहले तू ईश्वरके राज्य और उसकी पवित्रताकी खोज कर, उसके बाद दूसरी सब चीजें तुझे मिल जायेंगी |"

एथिकल रिलीजन, पृ. ६१-६४; १९२२